जिंदगी को जी भरकर जीना है

नौकरी से रिटायरमेंट अपने साथ अकेलापन लेकर आता है। कुछ लोग इसे स्वीकार कर लेते हैं और कुछ निकल पड़ते हैं खुशियां बिखेरने के लिए। बरेली के कुछ रिटायर 'नौजवानों' ने जिंदगी को जी भरकर जीने का फैसला किया। उन्होंने देशभर के ही नहीं, दुनिया के दूसरे देशों के लोगों को भी अपनी मंडली में शामिल किया और बनाया एक ऐसा अनूठा ग्रुप, जो हर संडे के तीसरे पहर सुरों की महफिल सजाते हैं। इंटरनेट के पंखों पर सवार यह 'सुरीले नौजवान' जूम के जरिए अपने-अपने घरों से जुड़ते हैं। मजेदार बात यह है कि हर प्रोग्राम की एक थीम होती है। कभी सिर्फ साहिर के लिखे गीत गाए जाते हैं, तो कभी सिर्फ मन्ना डे के गाए गीत। अहम यह भी है कि इस ग्रुप में आधी संख्या महिलाओं की है। ग्रुप में अमेरिका और आस्ट्रेलिया से भी मेंबर हैं। इस ग्रुप का नाम है गा लो-मुस्कुरा लो।

-कुमार रहमान, बरेली

कब बना ग्रुप

वह 21 अप्रैल 2021 का दिन था। कोविड के खौफ भरे दिन। जिंदगी बचाने की जद्दोजहद के बीच अकेले और खामोश दिन। सभी अपने-अपने घरों में कैद। तनाव भरे इन पलों में अरुण कुमार शर्मा के जेहन में ख्याल आया कि क्यों न एक ग्रुप बनाया जाए, जिसमें सभी लोग ऑनलाइन जुड़ें और गीत-संगीत की महफिल सजाई जाए। उन्होंने यह विचार पत्नी कंचन शर्मा को बताया। वह तैयार हो गईं। अरुण शर्मा बैंक ऑफ बड़ौदा में चीफ मैनेजर थे और अब रिटायर हो गए हैं। फोन पर यह बात उन्होंने अपने दोस्त अशोक कुमार सक्सेना को बताई। अशोक कुमार डाकघर में प्रवर अधीक्षक थे और वह भी रिटायर हो गए हैं। उन्हें भी ख्याल जंच गया। उसी दिन सभी जूम ऐप के जरिए ऑनलाइन जुड़े और सजा ली संगीत संध्या। पहले प्रोग्राम में सात लोग थे, लेकिन दूसरा आयोजन अपने साथ निराशा लाया। सदस्यों की संख्या बढ़ने के बजाए घटकर दो रह गई। आज ग्रुप में 150 सदस्य हैं, जिनमें एक्टिव मेंबर 70 के आसपास हैं। ज्यादातर रिटायर्ड लोग हैं। बरेली के अलावा लखनऊ, कानपुर, नोएडा, गाजियाबाद, मेरठ, आगरा, मुंबई, बीकानेर, इंदौर के साथ ही अमेरिका और आस्ट्रेलिया से लोग शामिल होते हैं। बरेली से तकरीबन 25 लोग इस ग्रुप में हैं। अब ग्रुप को रजिस्टर्ड भी करा लिया गया है और इसका नाम हो गया है 'गा लो-मुस्कुरा लो' वेल्फेयर सोसायटी। यह सोसायटी वेल्फेयर के काम भी करती है। इसके अध्यक्ष अशोक कुमार सक्सेना और सचिव अरुण कुमार शर्मा हैं। श्री शर्मा कहते हैं कि पत्नी कंचन शर्मा के बिना यह आयोजन हो पाना संभव नहीं है। उनका बराबर का सहयोग रहता है।

कैसे होता है आयोजन

इसका आयोजन हर संडे को शाम चार बजे होता है और रात आठ बजे तक चलता है। टीम ने वाट्सऐप पर एक ग्रुप बना रखा है। प्रोग्राम में शामिल होने वाले साथी रविवार को दोपहर दो बजे तक अपना नाम और गाना ग्रुप में भेज देते हैं। अरुण शर्मा इसे कोआर्डिनेट करते हैं और एक लिस्ट बनाते हैं। फिर पौने चार बजे तक सभी जूम ऐप पर ऑनलाइन जुड़ जाते हैं और अपने क्रम के हिसाब से गीत पेश करते हैं। खास बात यह है कि गीत के साथ संगीत भी होता है। इसके लिए एक ऐप का इस्तेमाल किया जाता है। इसमें डूइट भी गाते हैं। अब तक इसके 289 प्रोग्राम हो चुके हैं।

संगीत ने खालीपन किया दूर

ग्रुप के अध्यक्ष अशोक कुमार सक्सेना ने बताया कि अरुण शर्मा के प्रोत्साहन से अब उन्होंने भी गाना शुरू किया है। इससे पहले उन्होंने कभी सार्वजनिक तौर पर गाने के बारे में सोचा भी नहीं था। वह कहते हैं, "संगीत ने रिटायरमेंट के खालीपन को भर दिया।" वह बरेली में सुरेश शर्मा नगर में रहते हैं। उन्होंने बताया कि ग्रुप में बहुत सारी ऐसी महिलाएं हैं, जिन्होंने पतियों के प्रोत्साहन से अब गाना शुरू किया है।

हर बार नया बैकग्राउंड

हर प्रोग्राम का एक नया बैक ग्राउंड होता है। इसे अरुण शर्मा खुद डिजाइन करते हैं। इसमें थीम के हिसाब से बैकग्राउंड होता है। ऊपर की तरफ थीम का नाम और नीचे उस दिन की तिथि और सन। जैसे साहिर लुधियानवी के स्पेशल प्रोग्राम की डिजाइन में उनकी एक तस्वीर थी और कुछ म्यूजिकल इंस्ट्रूमेंट। इसे रिकॉर्ड में भी रखा जाता है।

यूट्यूब चैनल भी

ग्रुप का अपना यूट्यूब चैनल भी है। हर संडे को होने वाले प्रोग्राम की बाकायादा रिकॉर्डिंग और एडिटिंग की जाती है। उस वीडियो को सभी मेंबरों को भेजने के साथ ही यूट्यूब पर भी अपलोड किया जाता है।

ऑफलाइन भी होता है प्रोग्राम

ग्रुप हर तीसरे महीने मंच पर भी प्रोग्राम का आयोजन करता है। इसमें ग्रुप से बाहर के लोग भी शिरकत करते हैं। यह काफी लोकप्रिय आयोजन है। इसे हर तीसरे महीने आयोजित किया जाता है। अब तक इसके 19 आयोजन हो चुके हैं।

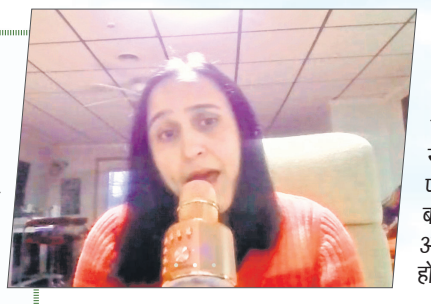

बरेली की नीरा जुड़ती हैं अमेरिका से

नीरा इस ग्रुप की एक्टिव मेंबर हैं। वह डेढ़ साल से इस ग्रुप से जुड़ी हैं। नीरा यहां बिहारीपुर में रहती थीं। उनके पिता दिवंगत रघुवीर नारायण मेहरोत्रा तिलक इंटर कॉलेज में टीचर थे। नीरा ने साहूराम स्वरूप महिला डिग्री कॉलेज से संगीत (गायन) में पीएचडी की है। शादी के बाद वह अमेरिका चली गईं। उन्होंने बताया कि उन्हें संडे का बेसब्री से इंतजार रहता है। उस वक्त अमेरिका में सुबह का वक्त रहता है। इस प्रोग्राम में शामिल होकर उनका पूरा दिन संगीतमय हो जाता है।

आस्ट्रेलिया से जुड़ते हैं अरविंद

अरविंद वर्मा पटना के हैं। बरेली उनकी ससुराल है। वह बरेली में स्टेट बैंक में मैनेजर थे। बरेली में सात साल रहे। बाद में आस्ट्रेलिया जा बसे। उन्हें भी इस प्रोग्राम की प्रतीक्षा रहती है। वह एक साल से इस ग्रुप से जुड़े हैं। वह आमतौर पर मन्ना डे, किशोर कुमार, तलत महमूद और हेमंत कुमार को गाना पसंद करते हैं।

फिजी रेडियो में गाते थे नीरज

नीरज टंडन बरेली के बैंक ऑफ बड़ौदा में एजीएम हैं। वह और उनकी पत्नी नीतू टंडन भी बराबर प्रोग्राम में शरीक होते हैं। नौकरी के सिलसिले में वह कई देशों में रहे हैं। वह बीओबी की फिजी ब्रांच में भी रहे। इस दौरान उन्होंने रेडियो फिजी में काफी प्रोग्राम किए। वह वहां गीत प्रस्तुत किया करते थे। इसे काफी पसंद किया जाता था। सिंगिंग उनका बचपन का पैशन है।

जॉब का पहला दिन

जब जिम्मेदारी ने गौरव का रूप लिया

मेरे जीवन की किताब में कुछ पन्ने ऐसे हैं, जिन्हें मैं जब भी पलटती हूं, तो उनकी चमक आज भी ताजा महसूस होती है। उन्हीं में से एक सबसे महत्वपूर्ण और यादगार पन्ना है 1 अगस्त 2011 का, जब पहली बार मैं बाराबंकी के मुंशी रघुनंदन प्रसाद सरदार पटेल महिला महाविद्यालय के प्राचार्या से मिली तो प्राचार्या ने कहा कि हमारे कॉलेज की बस प्रतिदिन लखनऊ से आती है, जिससे आपको यहां आने में कोई असुविधा नहीं होगी।

डॉ. रचना श्रीवास्तव
अवध विश्वविद्यालय
अयोध्या

विश्वविद्यालय में मेरे बतौर प्रोफेसर चयन की कहानी बड़ी दिलचस्प है। मैं एक बार दूरदर्शन का एक प्रोग्राम कर रही थीं। उस प्रोग्राम को विश्वविद्यालय की प्राचार्या भी देखकर रहीं थीं। उनको मेरी गायकी बहुत पसंद आई और मेरी प्रतिभा से प्रभावित होकर मुझे मिलने के लिए बुलाया। प्राचार्य ने साक्षात्कार के बाद स्टाफ के सदस्य को बुलाकर उसे स्टॉफ रूम ले जाने को कहा। स्टॉफ रूम में सभी सदस्य साड़ी पहने थीं। क्योंकि इस कॉलेज में साड़ी कंपलसरी थी, मैं भी साड़ी में ही गई थी। जिसे देखकर मेरे मन में आत्मविश्वास बढ़ा। यह देखकर मुझे परिसर परिवार जैसा लगने लगा।

उस सुबह की हवा में एक हल्की सी ठंडक थी, जो मन में उमड़ते उत्साह और आशंकाओं के बीच एक सुकून दे रही थी। जब मैंने विश्वविद्यालय के विशाल और हरे-भरे परिसर में कदम रखा, तो एक अजीब सा गर्व महसूस हुआ। वह शैक्षणिक वातावरण, विभागों की पुरानी, लेकिन भव्य इमारतें और छात्रों की चहल-पहल सब कुछ जैसे मुझे पुकार रहा था। मुझे अहसास हुआ कि आज से मेरी पहचान केवल एक व्यक्ति के रूप में नहीं, बल्कि राष्ट्र के निर्माता यानी एक 'शिक्षक' के रूप में होने वाली है।

विभाग पहुंचते ही विभागाध्यक्ष ने जिस गर्मजोशी से मेरा स्वागत किया, उसने मेरी सारी हिचकिचाहट को पल भर में दूर कर दिया। सहकर्मियों का वह सहज और सहयोगी व्यवहार

मेरे लिए किसी वरदान से कम नहीं था, लेकिन असली चुनौती अभी बाकी थी। औपचारिकताओं के बीच मुझे बताया गया कि आज ही मेरी पहली कक्षा है। यह सुनकर मन में उत्साह तो था, पर साथ ही एक अनजानी घबराहट ने भी दस्तक दी।

जब मैं कक्षा के द्वार पर पहुंची, तो दर्जनों उत्सुक निगाहें मेरी ओर मुड़ गईं। वह मेरा पहला व्याख्यान था। मैंने अपनी आवाज को संयत किया और सहजता से संवाद शुरू किया। शुरुआत में शब्दों में थोड़ी झिझक थी, लेकिन जैसे ही मैंने विषय की गहराई में उतरना शुरू किया, मेरा आत्मविश्वास लौट आया। मैंने कोशिश की कि मैं केवल 'पढ़ाऊं' नहीं, बल्कि 'जुड़ूं'। जब छात्रों ने सवाल पूछना शुरू किया और कक्षा एक जीवंत चर्चा में तब्दील हो गई, तब मुझे लगा कि मैं अपनी बात उन तक पहुंचाने में सफल रही हूं।

कक्षा के बाद जब कुछ छात्र अपनी जिज्ञासाएं लेकर मेरे पास आए, तो मुझे एक बड़ी सच्चाई का अनुभव हुआ। एक शिक्षक केवल सूचनाओं का स्रोत नहीं होता, बल्कि वह एक मार्गदर्शक और प्रेरक भी होता है। उनकी आंखों की वह उम्मीद ही मेरी सबसे बड़ी जिम्मेदारी थी।

दोपहर में स्टाफ रूम में वरिष्ठ सहयोगियों के साथ बिताया गया समय भी बहुत कीमती रहा। उनके अनुभवों से निकले सुझावों ने मुझे सिखाया कि अध्यापन केवल ब्लैकबोर्ड तक सीमित नहीं है, यह निरंतर सीखने की एक प्रक्रिया है। दिन ढलने पर जब मैं परिसर से बाहर निकली, तो शरीर में थकान तो थी, लेकिन मन आत्मसंतुष्टि और गहरी खुशी से भरा था। वह दिन मेरे लिए केवल एक करियर की शुरुआत नहीं, बल्कि एक ऐसे संकल्प का आगाज था, जिसमें ज्ञान बांटने और समाज को एक नई दिशा देने का अवसर छुपा था। आज भी जब मैं पीछे मुड़कर देखती हूं, तो वह दिन मुझे याद दिलाता है कि सपनों को जीने का साहस ही हमें जीवन के सबसे यादगार पल देता है।

नई कहानी के प्रमुख स्तंभ शेखर जोशी

शेखर जोशी की गणना हिन्दी साहित्य के प्रमुख कहानीकारों में की जाती है। उन्होंने नई कहानी के विकास में प्रमुख भूमिका निभाई। वे मर्मस्पर्शी कहानियों के प्रमुख कथाशिल्पी थे। उनकी कहानियों में आम आदमी का प्रतिबिंब झलकता है।

शेखर जोशी का जन्म 10 सितंबर 1932 को अल्मोड़ा जिले के सोमेश्वर गांव में हुआ था। सोमेश्वर को पहाड़ी भाषा में ओलिया भी कहते थे। उनके पिता एक साधारण किसान थे। इसलिए उनका बचपन अभावों में बीता। शेखर जोशी की शिक्षा अजमेर और देहरादून में हुई थी। इंटरमीडिएट की पढ़ाई के दौरान ही उनका चयन सुरक्षा विभाग में ई.एम.ई. अप्रेन्टिसशिप के लिए हो गया। 1996 तक वे एक सैनिक औद्योगिक प्रतिष्ठान में सेवारत रहे। इसके बाद उन्होंने स्वैच्छिक रूप से त्यागपत्र दे दिया और स्वतंत्र रूप से लेखन कार्य में जुट गए।

उनकी रुचि कहानी लेखन में थी इसलिए उन्होंने कहानियां लिखना प्रारंभ कीं। आम आदमी को केन्द्र मानकर पारिवारिक एवं सामाजिक ताने-बाने पर बुनी उनकी कहानियां बहुत लोकप्रिय हुईं। उनकी कहानियों की प्रसिद्धि देश की सीमाओं को पार कर विदेशों तक जा पहुंची और उनकी गणना हिन्दी के अग्रिम पंक्ति के कहानीकारों में होने लगी। अपनी साहित्य यात्रा के दौरान उन्होंने 'कोशी के घटवार', 'दाज्यू', 'बदबू', 'मेटल', 'पेड़ की याद', नौरंगी बीमार है' तथा प्रतिनिधि कहानियां जैसी अमर कृतियों की रचना की। उनको विशेष प्रसिद्धि 'कोशी के घटवार' से मिली। उनकी कुछ कहानियों का अनुवाद अंग्रेजी, चेक, पोलिश एवं रूसी भाषाओं में भी हुआ। उनकी एक कहानी "दाज्यू" पर बाल फिल्म भी बनी।

उन्होंने कई उपन्यास भी लिखे। 'अथ मूषक उवाच', 'हलवाला', 'साथ के लोग', 'मेरा पहाड़', 'चींटी के पर' आदि शामिल हैं। मगर उन्हें विशेष प्रसिद्धि कहानीकार के रूप में मिली। शेखर की कहानियों में पहाड़ी जीवन, पहाड़ी संस्कृति एवं पहाड़ी परिवेश की झलक स्पष्ट रूप से देखने को मिलती है। उनका जन्म एक साधारण कृषक परिवार में हुआ था इसलिए उनकी कहानियों में गरीबी, उत्पीड़न, नारी संघर्ष तथा पहाड़ी ग्रामीण समाज में फैली रुढ़ियों का सजीव चित्रण मिलता है। उन्होंने पहाड़ी जीवन के कठोर यथार्थ को अपनी कहानियों के माध्यम से समाज तक पहुंचाने का सफल प्रयास किया है। इसलिए उनकी कहानियां जीवंत प्रतीत होती हैं।

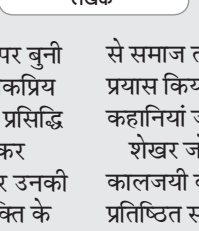

सुरेश बाबू मिश्रा
लेखक

शेखर जोशी को उनकी कालजयी कहानियों के लिए कई प्रतिष्ठित सम्मानों से अलंकृत किया गया। सन् 1987 में उन्हें उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान से महावीर प्रसाद द्विवेदी साहित्य सम्मान से समादृत किया गया। सन् 1995 में हिन्दी साहित्य का अति प्रतिष्ठित सम्मान साहित्य भूषण प्रदान किया गया। सन् 1997 में उन्हें 'पहल' सम्मान व 'मैथिलीशरण गुप्त' सम्मान से समादृत किया गया। अभी कुछ समय पूर्व उन्हें 'श्री लाल शुक्ल सम्मान' भी दिया गया। आज वे हमारे मध्य नहीं हैं, मगर अपनी कालजयी रचनाओं के रूप में वे सदैव अमर रहेंगे। उनकी कृतियां हिन्दी साहित्य की अनमोल धरोहर हैं।

नौकरी छोड़ गुलाबी फल से बदली अपनी किस्मत

कहते हैं कि अगर इरादे मजबूत हों और सोच वैज्ञानिक, तो मिट्टी भी सोना उगलने लगती है। बरेली के भोजीपुरा स्थित गांव महिमा पट्टी निवासी यशपाल (48) ने इसे सच कर दिखाया है। एमबीए की पढ़ाई के बाद एक निजी कंपनी में नौकरी करने वाले यशपाल ने कोरोना काल के संकट को अवसर में बदलते हुए खेती को अपना बिजनेस बनाया। आज वे गुलाबी फल, जिसे दुनिया "ड्रैगन फ्रूट" के नाम से जानती है, की खेती कर सालाना लाखों रुपये का मुनाफा कमा रहे हैं। यशपाल बताते हैं कि उनका लक्ष्य हमेशा से बिजनेस करना था, इसीलिए उन्होंने एमबीए किया। 2020 में जब कोरोना की लहर ने नौकरियों पर संकट खड़ा किया, तो उन्होंने निजी नौकरी छोड़ने का साहसिक फैसला लिया। हालात सामान्य होने पर उन्होंने ड्रैगन फ्रूट की खेती का मन बनाया और इसके गुर सीखने के लिए महाराष्ट्र और गुजरात के मॉडल फार्म्स का दौरा कर वहां से विधिवत प्रशिक्षण लिया।

– महिपाल गंगवार, बरेली

यशपाल ने 2023 में महज 48 पौधों के साथ ड्रैगन फ्रूट फैक्ट्री की शुरुआत की थी। आज वैज्ञानिक पद्धति और कड़ी मेहनत के दम पर उनके पास 25 हजार पौधे हैं। यशपाल के अनुसार, यह एक लॉन्ग टर्म बिजनेस है, जिसमें निवेश केवल एक बार करना होता है। तीन एकड़ में फैली इस खेती से वे सालाना 10 से 12 लाख रुपये कमा रहे हैं। एक बार बाग पूरी तरह तैयार होने पर सालाना मुनाफा 20 लाख रुपये तक पहुंच सकता है। इस सफलता में यशपाल के बड़े भाई और सेवानिवृत्त सैनिक सूरजपाल उनका पूरा साथ देते हैं। आज यशपाल न केवल खुद आत्मनिर्भर बने हैं, बल्कि उन्होंने 10 लोगों को रोजगार भी दिया है। वे अब तक चार नए फार्म खुलवा चुके हैं और अन्य किसानों को भी इस आधुनिक खेती का प्रशिक्षण दे रहे हैं। वह कहते हैं कि सबसे बड़ी राहत की बात यह है कि उन्हें मंडी के चक्कर नहीं काटने पड़ते, फल की गुणवत्ता ऐसी है कि व्यापारी खुद खेत पर आकर ड्रैगन फ्रूट ले जाते हैं, जिससे उन्हें मार्केटिंग की कोई चिंता नहीं रहती। उनका साफ कहना है कि अगर विजन वैज्ञानिक हो, तो खेती किसी भी कॉर्पोरेट नौकरी से बेहतर रिटर्न दे सकती है।

औषधीय गुणों से होता है भरपूर ड्रैगन फ्रूट

ड्रैगन फ्रूट की ऊपरी सतह पर गुलाबी और लाल रंग का होता है, जबकि अंदर का भाग पीले रंग का होता है। इसके सेवन से रक्ताल्पता की समस्या दूर होती है। साथ ही फाइबर और विटामिन सी की अच्छी मात्रा होने के चलते इस फल के सेवन से कई और बीमारियों में काफी हद तक निजात मिलती है। ड्रैगन फ्रूट के पौधे को 36 डिग्री सेल्सियस से अधिक तापमान और हल्के पानी की आवश्यकता होती है और इसकी खेती से बहुत सकारात्मक परिणाम मिलते हैं।